शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 अगस्त 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

भगवानदास मोरवाल के उपन्यासों में अभिव्यक्त साम्प्रदायिकता ('काला पहाड़' और 'बाबल तेरा देश में' के संदर्भ में)

अशोक राठोड (शोधार्थी)
हिंदी विभाग
बंगलौर विश्वविद्यालय
बैंगलोर, कर्नाटक, भारत

शोध संक्षेप

साम्प्रदायिकता एक विध्वंसात्मक तत्व है। यह मनुष्य को मनुष्यता से दूर कर देता है। व्यक्ति घृणा से प्रेरित हो एक-दूसरे की जान लेने पर आमादा हो जाता है। मनुष्य ने धर्म की रचना मिलबैठकर जीने के लिए की थी, लेकिन धर्मों की विविधता को एक-दूसरे के खिलाफ इस्तेमाल कर स्वार्थी तत्वों ने जनता के शोषण का हथियार बना लिया है। भगवान दास मोरवाल ने ग्रामीण क्षेत्रों में चुनाव के समय होने वाली साम्प्रदायिकता की राजनीति का चित्रण अपने दो उपन्यासों 'काला पहाड़' और 'बाबल तेरा देश में' किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में दोनों उपन्यासों में अभिव्यक्त साम्प्रदायिक स्थितियों का विश्लेषण किया गया है।

भूमिका

भारतीय समाज की रचना इस प्राकर की है कि इसमें साम्प्रदायिकता को फलने-फूलने के साधन आसानी से हासिल हो जाते हैं। भारत में दुनिया के आठ धर्म मौजूद हैं। इनकी शिक्षाओं को भारत के लोगों ने आत्मसात किया है। भारत की समन्वय की संस्कृति ने कभी धर्मों के भेदभाव को स्वीकार नहीं किया है। जब धर्म के साथ राजनीति का घालमेल किया गया, तब उसमें से साम्प्रदायिकता का जन्म हुआ। इस साम्प्रदायिकता का धर्म से, धार्मिक शिक्षा से दूर-दूर का नाता नहीं है। धर्म नितांत व्यक्तिगत विषय है। जब राजनीति को भीड़ एकत्र करना होती है, तब धर्म को लेकर एक विशेष प्रकार का वातावरण निर्मित किया जाता है। जनता की मूलभूत समस्याओं को हल करने के बजाय उसका ध्यान भटकाने के लिए वर्षों से इसका उपयोग किया जा रहा है। राजनीतिक नेतृत्व लोगों की आस्था का दोहन कर अपना उल्लू सीधा कर रहे हैं। स्वतंत्र भारत में साम्प्रदायिकता ने विभाजन की राजनीति को पुष्ट करने का काम किया है। इसे सत्ता हासिल करने का एकमात्र उपाय मान लिया गया है। इसने देश की एकता के ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर दिया है। सब कुछ समझने के बावजूद जनता इसे सहन करने पर मजबूर है।

काला पहाड़ और बाबल तेरा देश में साम्प्रदायिकता

भारत गावों का देश है। यहाँ पंचायती राज की समृद्ध परम्परा रही है। आजादी के बाद गावं के समग्र विकास की दृष्टि से पंचायती राज क़ानून बनाया गया। जिसके माध्यम से ग्रामीणजन स्वयं की जरूरतों के हिसाब से विकास करने में स्वतंत्र हो सकें। इस क़ानून का उद्देश्य बहुत

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका 17 अगस्त 2020
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

अच्छा था, लेकिन सत्ता के लिये लालायित लोगों ने ग्रामीण जनजीवन में विद्वेष का जहर घोल दिया। पंचायत चुनाव में धर्म और जाति का प्रवेश कर लोगों को आपस में बाँट दिया। ग्राम विकास की चिंता छोड़ कर सत्ता हासिल करने के प्रयास वे यह तक भूल गए हैं कि सभी के मेलजोल से ही विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। भगवान दास मोरवाल ने अपने उपन्यासों में मेवात क्षेत्र को अपने कथ्य का विषय बनाया है। नगीना में सरपंच के चुनाव की घोषणा होते ही स्थानीय नेता लोगों को हिन्दू और मुसलामानों में बाँट देते हैं। आपसी दुश्मनी के कारण अनेक लोग मेवात से पलायन कर जाते हैं।

'काला पहाड़' उपन्यास में पंचायत चुनाव साम्प्रदायिक मोड़ ले लेता है। नगीना में मेव की तरफ से हाजी असरफ और हिन्दुओं की ओर से मानक को सरपंच बनाने की तैत्यारी की जाती है। मानक पूर्व में भी सरपंच रह चुका है। दोनों ही नेता भ्रष्टाचार में आकंठ डूबे हैं। जनता दोनों की कारगुजारियों से भलीभांति परिचित है। दोनों ही नेता एक-दूसरे के धर्म के प्रति नफरत फैलाने का काम करने लगते हैं। एक शांति प्रिय गाँव को रण क्षेत्र बना देते हैं। मेव और हिन्दूओं में चुनाव प्रतिष्ठा का विषय बन जाता है। हैरान कर देने वाली बात यह है कि इलाके में चारों तरफ धूल ही धूल उड़ती रहती है, किसान और मजदूर बेरोजगार हो जाते हैं। उसकी चिंता किसी को नहीं रहती है। इलाके में रोजगार की कोई व्यवस्था नहीं है। छोटे-मोटे किसान मेवात से पलायन करने लगते हैं। नेता तमाशा देखते रह जाते हैं। स्थानीय नेता किसान और मजदूरों के लिए रोजगार की कोई व्यवस्था नहीं करते हैं। चुनाव नजदीक आते ही नेता जात-धर्म करने लगते हैं और गोती भाइयों के नाम पर वोट मांगने आ जाते हैं और उन्हें वोट मिल भी जाते हैं।

उपन्यास का पात्र हाजी असरफ जीत हासिल करने के लिए बाबू खाँ जैसे युवाओं को चुनाव प्रचार में लगा देता है। हाजी असरफ को जिताने के लिए युवा सलेमी का बेटा बाबू खाँ रात-दिन एक करने लगता है और मेव युवाओं को इकट्ठा कर हिन्दुओं के प्रति द्वेष भरने लगता है। बाबू खाँ अपने पिता पर हाजी असरफ को वोट डालने के लिए दबाव डालने लगता है। वह कहता है कि "बाप अबके बोट हाजी असरफ लू देणी है।"**1** बाबू खाँ को यह पता नहीं चलता है कि हाजी असरफ अपने फायदे के लिए यह सब कर रहा है। मगर सलेमी को पता है कि हाजी असरफ एक आवारा धर्म विरोधी नेता है। कहने के लिए हज कर आया है। मगर उसके विचार एक भी ठीक नहीं रहते हैं। हाजी असरफ कस्बे का विकास करने के लिए चुनाव नहीं लड़ता है। अपना स्वार्थ पूर्ण करने के लिए लड़ता है। यह अलगाववादी प्रवृत्ति के युवा बाबू खाँ को पता नहीं चलता है। हाजी असरफ भडकाऊ भाषणबाजी कर युवाओं को भड़काता है और नगीना जैसे शांत इलाके में अशांति फैलाता है। सलेमी लाख कोशिश कर बाबू खाँ को समझाता है, मगर बाबू खाँ एक भी नहीं सुनता है। बाबू खाँ कहता है कि "बाप तू तो बेमतलब की बात कर रो है... कहा कमी है हाजी असरप में...अरे मक्का सू हिजरत करके ऊ आयो है....पाँचू बखत निवाज उ पढ़ है... और दो चार हजार की जरुरत पड़ जाए तो उन्ने भी फट्ट निकाल के दे देव है।"**2** बाबू खाँ हाजी असरफ के असली खेल को समझ नहीं पाता है। नाम के

लिए पाँच वक्त की नमाज पढ़ता है। मगर उसका मन अपवित्र ही रहता है।

सलेमी, हाजी असरफ की असलियत के बारे में बाबू खाँ को समझा कर कहता है कि "मोहे सब पतो है के तेरा मुरसी अहमद ने या जाजी असरप न को नाम काँई लू आगे करो हओ, ई वही हाजी असरप है जो रात-दिन या मुरसीद की दलाली करते डोले है.... तू कह तो रो है के ऊ पाँचू बखत की निवाज पढ़े है, पर ई ना कह रो है कि रात-दिन बस हराम की दौलत सकेरना में लगो रे हओ....जा दिन सू ई हज्ज करके आयो है, वाई दिन सू बश याही जुगाड़ में लग रो है के कैसे या गाँओं पे फतह पाऊँ... मै ना देऊँ काई हाजी-वाजी लू बोट... मेरा जी मै जहाँ आएगी हून दूँगो।'**3** सलेमी तो समझादार है, जो वोट देने से इनकार कर देता है, मगर वोट देने वाला सलेमी अकेला नहीं है और भी बहुत सारे धर्म अंध लोग हैं जो हाजी असरफ को वोट देने के लिए आगे आ जाते हैं। सलेमी देश हित में सोचता है और बेटा धर्म हित के बारे में सोचता है। इधर हिन्दुओं में भी चुनाव की तैयारी जोर पकड़ लेती है। जीत हासिल करने के लिए हिन्दू राष्ट्र और हिन्दुत्व का प्रचार करने लगते हैं। चुनाव जीतने के लिए दलितों की बस्तियों तक जाने लगते हैं और दलितों को हिंदुत्व का पाठ पढ़ाने लगते हैं। अबयचंद मानक पिछली बार के जैसा इस बार भी जीत हासिल करने के लिए जमीन-आसमान एक कर देता है। "लाला अबयचंद मानक से अधिक भ्रष्टाचारी, दुराचरी और हिन्दू विरोधी इस पूरे नगीना में कोई नहीं हैं।"**4** फिर भी हिन्दू लोग मानक के साथ खड़े हो जाते हैं। लोगों के लिए विकास से ज्यादा धर्म ही महत्व पूर्ण बन जाता है। वोट हासिल करने के लिए दिल्ली तक जा कर मतदाताओं को पैसे दे कर ले आते हैं। नेताओं की चाल अंध धर्म भक्तों को पता ही नहीं चलती है। नेताओं के द्वारा फैलाए गए जाल में फंसते ही जाते हैं। लोगों को पता ही नहीं चलता है कि खुद के गले में फंदा डाल ले रहे हैं। मानक को जिताने के लिए लाला ज्ञानचंद जैन, लाला अभयचंद आर्या और बिसबंर दयाल मेहता कमर कस लेते हैं। तीनों तीन तरह की जिम्मेदारी ले कर मानक को जिताने के लिए कसम खा लेते हैं। उसके लिए किसी भी हद तक जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। चुनाव प्रचार में जान लगा देते हैं। लाला ज्ञानचंद जैन दिल्ली में बसे जगनी से कहता है कि "मेंवन्नि तो ये ठान ली है के अब के सरपंच मेव ही होगा... इधर हमने भी पक्का इरादा कर लिया है कि चाहे सन सत्तावन हो जाए, सरपंची किसी भी हाल में मेवों के पास नहीं जाने देंगे।"**5** छोटे-से सरपंच चुनाव के लिए लोग सन सत्तावन करने के लिए तैयार हो जाते हैं। मगर किसी नेता के मुँह से गरीबी उन्मूलन करने की बात नहीं निकलती है। इलाके से पलायन कर शहर की ओर जा रहे लोगों को रोजगार दिलाकर इलाके में रहने जैसे सुविधा नहीं कर देते हैं। हर किसी को कुर्सी हासिल कर लेने का ज्ञान रहता है, मगर मजदूरों की ओर किसी का ध्यान नहीं जाता है। मानक बहुत चालाकी से हिन्दू और मेव का वोट हासिल कर लेता है और चुनाव जीत जाता है।

भवनादास मोरवाल जी ने पंचायत चुनाव का जिक्र 'बाबल तेरा देश में' उपन्यास में भी किया है। 'बाबल तेरा देश में' लेखक ने पंचायत चुनाव में स्त्रियों को विशेष प्रधानता दी है। सरपंच के इस चुनाव में सरकार स्त्रियों को आरक्षण देती है, जिससे मेव पुरुषों के पुरुषत्व को चोट पहुँची है। हवेली के पुरुष सरकार के इस फैसले पर ना खुश होते हैं। पुरुष कहने लगते हैं कि "याको

मतलब ई हुओ रामचंद्र के ई मुलक तो मुलक अब इन गाँवन में भी ये बीरबाणी करेंगी हमारे ऊपर राज। अब ये देंगी हमन्ने के हुकम के हमन्ने कहा करनो है।"**6** मेव पुरुष किसी मेव स्त्री को घर से बाहर नहीं भेजना चाहते हैं। इसलिए सरकार के इस फैसले से नाराज होने लगते हैं। चाँदमल कहता है कि "अन्यायी, या सिरकार ने हद ना कर दी। अरे या गाँओ में मरद-माणस बधिया होगा हैं, जो ई सरपंची या घाघरा पलटन का हाथन में दी जा री है।"**7** पुरुष मानसिक स्थिति स्त्री को आगे आने नहीं देती है। उसे चार दीवारों में ही कैद कर रखना चाहते हैं। अंत में सरकार के फैसले के अनुसार हवेली की तरफ से शकीला और हिन्दू की तरफ से पद्मा चुनाव लड़ती है।

इस चुनाव में हिन्दू-मुस्लिम साथ मिलकर लड़ते हैं। इस चुनाव में बहुत कोशिश करने के बावजूद भी पद्मा हार जाती है और शकीला जीत जाती है। शकीला इसलिए जीतती है क्योंकि वह निस्स्वार्थ भाव से चुनाव लड़ती है, मगर पद्मा स्वार्थ से चुनाव लड़ती है इसलिए वह हार जाती है। स्त्रियों के लिए आरक्षित चुनाव में पहली बार कोई साम्प्रदायिक वातावरण नहीं बन पाता। मगर दूसरी बार के चुनाव में साम्प्रदायिक तनाव आरम्भ हो जाता है। इस चुनाव में हिन्दू-मुस्लिम की प्रतिष्ठा का विषय बन जाता है। हिन्दुओं को बुला कर यह चेतावनी दी जाती है कि कोई भी हिन्दू मेव को वोट नहीं देगा। जो मेव को वोट देंगे, उसे देशद्रोही का दर्जा दिया जाएगा। चम्मारों को भी यही चेतावनी दी जाती है। शकीला सरपंच बनने के बाद गांव में अनेक सुधार काम करती है। अनेक बूढ़े लोगों की सहायता करती है। बूढ़े लोगों को बुढ़ापा वेतन दिलाती है। हर मोहल्ले में काम करवाती है। इतने सारे काम करने के बावजूद भी दूसरी बार के चुनाव में हार जाती है और पद्मा जीत जाती है। दूसरी बार के चुनाव में विकास के नाम पर वोट नहीं पड़ते हैं, जात-धर्म के नाम पर पड़ते हैं। सालिगराम अपनी बहू को जिताने के लिए शराब की बोतल और पैसे बंटवाता है।

इधर हवेली में शकीला का हार जाने को ले कर चर्चा होने लगती है। "अब एक बात बता ऐसो कौण-सो मोहल्ला है जहाँ हमने काम ना करायो। इन हरिजनन को ऐशो कौण-सो काम हो जो इन्ने एक बोट तो दी हो, सकीला कू।"**8** शकीला सच्चे दिल से काम करती है फिर भी जनता शकीला के साथ नहीं खड़ी होती है। रामचन्द्र कहता है कि "इन इलेक्शन में बोट आदमी और आदमी के नाम ना गिरी है बल्कि हिन्दू और मुसलमान के नाम पे गिरी है।"**9** चुनाव में एक अच्छे इंसान को महत्व नहीं दिया है, सिर्फ जात-धर्म को ही अधिक महत्व दिया जाता है। "ये तो छोटी सी-पंचायत इलेक्सन हैं। जामें इतना खेल रचा गया है। अंदाजा लगाओ के बड़ा-बड़ा इलेक्सन में कहा हाल होती होएगी, जाहाँ आदमी, सियासत में हिस्सेधारी मिले है।"**10**

निष्कर्ष

देश में चुनाव का चेहरा बदल गया है। वह गाँव से अलग नहीं हैं। देश में समझदारों की संख्या बहुत कम होती जा रही है और अंध धर्म भक्तों की संख्या अधिक होती जा रही है, जिससे देश पर बुरा असर पड़ने लगा है। धर्म के अंध भक्त देश को विनाश की ओर झोंक रहे हैं। धर्म की राजनीति से देश का ठीक से विकास नहीं हो पा रहा है। नेता जनता की कमजोरी जान चुके हैं। उन्हें धर्म के नाम पर लड़वाकर खूब पैसा कमाने लगते हैं। एक छोटे-से चुनाव में भी नेता साम्प्रादायिकता फैलाने लगते हैं। गाँव का विकास

भूल जाते हैं। गाँव या देश की फ़िक्र उन नेताओं को नहीं रहती है बस अपनी ही फ़िक्र रहती है। चुनाव की परिभाषा ही बदलती जा रही है। नेताओं की मनमानी के आगे किसी की नहीं चलती है। आज नेताओं की भाषा इतनी बदल गयी है कि बात-बात पर हिन्दू-मुस्लिम करते हैं। विकास का काम न कर पिछली सरकार की कमजोरी गिनाने में पाँच साल निकाल लेते हैं और पाँच साल के बाद फिर वोट मांगने आ जाते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

1 भगवानदास मोरवालए काला पहाड़, पृष्ठ 374
2 वही, पृष्ठ 375
3 वही, पृष्ठ 375-376
4 वही, पृष्ठ 377
5 वही, पृष्ठ 387
6 भगवानदास मोरवाल, बाबल तेरा देश में, पृष्ठ 310
7 वही, पृष्ठ 310
8 वही, पृष्ठ 400
9 वही, पृष्ठ 400
10 वही, पृष्ठ 401